शुक्लयजुर्वेद-संहितामें रुद्राष्टाध्यायी एवं रुद्रमाहात्म्यका अवलोकन

(शास्त्री श्रीजयन्तीलालजी त्रि० जोषी)

'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्'—श्रीमनु महाराजके कथनानुसार भगवान् वेद सर्वधर्मोंके मूल हैं या सर्वधर्ममय हैं।

वेदों एवं उनकी विभिन्न संहिताओंमें प्रकृतिके अनेक तत्त्व—आकाश, जल, वायु, उषा, संध्या इत्यादिका तथा इन्द्र, सूर्य, सोम, रुद्र, विष्णु आदि देवोंका वर्णन और स्तुति-सूक्त प्राप्त होते हैं। इनमें कुछ ऋचाएँ निवृत्तिप्रधान एवं कुछ प्रवृत्तिप्रधान हैं।

शुक्लयजुर्वेद-संहिताके अन्तर्गत रुद्राष्टाध्यायीके रूपमें भगवान् रुद्रका विशद वर्णन निहित है।

भक्तगण इस रुद्राष्टाध्यायीके मन्त्रपाठके साथ जल, दुग्ध, पञ्चामृत, आम्ररस, इक्षुरस, नारिकेलरस, गङ्गाजल आदिसे शिवलिङ्गका अभिषेक करते हैं।

शिवपुराणमें सनकादि ऋषियोंके प्रश्नपर स्वयं शिवजीने रुद्राष्टाध्यायीके मन्त्रोंद्वारा अभिषेकका माहात्म्य बतलाया है, भूरि-भूरि प्रशंसा की है और बड़ा फल दिखाया है—

मनसा कर्मणा वाचा शुचिः संगविवर्जितः।
कुर्याद् रुद्राभिषेकं च प्रीतये शूलपाणिनः॥
सर्वान् कामानवाप्नोति लभते परमां गतिम्।
नन्दते च कुलं पुंसां श्रीमच्छम्भुप्रसादतः॥

धर्मशास्त्रके विद्वानोंने रुद्राष्टाध्यायीके छः अङ्ग निश्चित किये हैं, जो निम्न हैं—

शिवसङ्कल्पो हृदयं सूक्तं स्यात् पौरुषं शिरः।
प्राहुर्नारायणीयं च शिखा स्याच्चोत्तराभिधम्॥
आशुः शिशानः कवचं नेत्रं विभ्राड् बृहत्स्मृतम्।
शतरुद्रियमस्त्रं स्यात् षडङ्गक्रम ईरितः॥
हृच्छिरस्तु शिखा वर्म नेत्रं चास्त्रं महामते।
प्राहुर्विधिज्ञा रुद्रस्य षडङ्गानि स्वशास्त्रतः॥

अर्थात् रुद्राष्टाध्यायीके प्रथमाध्यायका शिवसङ्कल्पसूक्त हृदय है। द्वितीयाध्यायका पुरुषसूक्त सिर एवं उत्तरनारायण-सूक्त शिखा है।

तृतीयाध्यायका अप्रतिरथसूक्त कवच है। चतुर्थाध्यायका मैत्रसूक्त नेत्र है एवं पञ्चमाध्यायका शतरुद्रिय सूक्त अस्त्र कहलाता है।

जिस प्रकार एक योद्धा युद्धमें अपने अङ्गों एवं आयुधोंको सुसज्ज-सावधान करता है, उसी प्रकार अध्यात्म-मार्गी साधक रुद्राष्टाध्यायीके पाठ एवं अभिषेकके लिये सुसज्ज होता है। अतः हृदय, सिर, शिखा, कवच, नेत्र, अस्त्र इत्यादि नामाभिधान दृष्टिगोचर होते हैं।

अब हम रुद्राष्टाध्यायीके प्रत्येक अध्यायका किंचित् अवगाहन करें।

प्रथमाध्यायका प्रथम मन्त्र—**'गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे'** बहुत ही प्रसिद्ध है। कर्मकाण्डके विद्वान् इस मन्त्रका विनियोग श्रीगणेशजीके ध्यान-पूजनमें करते हैं। यह मन्त्र ब्रह्मणस्पतिके लिये भी प्रयुक्त होता है। शुक्ल-यजुर्वेद-संहिताके भाष्यकार श्रीउव्वटाचार्य एवं महीधराचार्यने इस मन्त्रका एक अर्थ अश्वमेध-यज्ञके अश्वकी स्तुतिके रूपमें भी किया है।

द्वितीय एवं तृतीय मन्त्रमें गायत्री आदि वैदिक छन्दों तथा छन्दोंमें प्रयुक्त चरणोंका उल्लेख है। पाँचवें मन्त्र **'यज्जाग्रतो'** से दशम मन्त्र **'सुषारथि'** पर्यन्तका मन्त्रसमूह 'शिवसङ्कल्पसूक्त' कहलाता है। इन मन्त्रोंका देवता 'मन' है। इन मन्त्रोंमें मनकी विशेषताएँ वर्णित हैं। प्रत्येक मन्त्रके अन्तमें **'तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु'** पद आनेसे इसे 'शिवसङ्कल्पसूक्त' कहा गया है। साधकका मन शुभ विचारवाला हो, ऐसी प्रार्थना की गयी है। परम्परानुसार यह अध्याय श्रीगणेशजीका माना जाता है।

द्वितीयाध्यायमें **'सहस्रशीर्षा पुरुषः'** से **'यज्ञेन यज्ञम्'** पर्यन्त षोडशमन्त्र पुरुषसूक्तके रूपमें हैं। इन मन्त्रोंके नारायण ऋषि हैं एवं विराट् पुरुष देवता हैं।

विविध देवपूजामें आवाहनसे मन्त्र-पुष्पाञ्जलितकका षोडशोपचार-पूजन प्रायः इन्हीं मन्त्रोंसे सम्पन्न होता है। विष्णुयागादि वैष्णव-यज्ञोंमें भी पुरुषसूक्तके मन्त्रोंसे यज्ञ होता है।

पुरुषसूक्तके प्रथम मन्त्रमें विराट् पुरुषका अति भव्य दिव्य वर्णन प्राप्त होता है। अनेक सिरोंवाले, अनेक आँखोंवाले, अनेक चरणोंवाले वे विराट् पुरुष समग्र ब्रह्माण्डमें व्याप्त होकर दस अंगुल ऊपर स्थित हैं।

द्वितीयाध्यायके सप्तदश मन्त्र **'अद्भ्यः सम्भृतः'** से **'श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च'**-अन्तिम मन्त्रपर्यन्तके छः मन्त्र उत्तरनारायण सूक्तके रूपमें प्रसिद्ध हैं। **'श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च'** यह मन्त्र

श्रीलक्ष्मीदेवीके पूजनमें प्रयुक्त होता है। द्वितीयाध्याय भगवान् विष्णुका माना जाता है।

तृतीयाध्याय अप्रतिरथसूक्तके रूपमें ख्यात है। कतिपय मनीषी '**आशुः शिशानः**' से आरम्भ करके '**अमीषाञ्चित्तम्**'-पर्यन्त द्वादश मन्त्रोंको स्वीकारते हैं। कुछ विद्वान् इन मन्त्रोंके उपरान्त '**अवसृष्टा**' से '**मर्म्माणि ते**'-पर्यन्त पाँच मन्त्रोंका भी समावेश करते हैं।

तृतीयाध्यायके देवता देवराज इन्द्र हैं। इस अध्यायको अप्रतिरथसूक्त माननेका कारण कदाचित् यह है कि इन मन्त्रोंके ऋषि अप्रतिरथ हैं। भावात्मक दृष्टिसे विचार करें तो अवगत होता है कि इन मन्त्रोंद्वारा इन्द्रकी उपासना करनेसे शत्रुओं-स्पर्धकोंका नाश होता है, अतः यह '**अप्रतिरथ**' नाम सार्थक प्रतीत होता है। उदाहरणके रूपमें प्रथम मन्त्रका अवलोकन करें—

ॐ आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम्। सङ्क्रन्दनोऽ निमिष एकवीरः शतꣳसेना अजयत् साकमिन्द्रः॥

अर्थात् 'त्वरासे गति करके शत्रुओंका नाश करनेवाला, भयंकर वृषभकी तरह सामना करनेवाले प्राणियोंको क्षुब्ध करके नाश करनेवाला, मेघकी तरह गर्जना करनेवाला, शत्रुओंका आवाहन करनेवाला, अतिसावधान, अद्वितीय वीर, एकाकी पराक्रमी देवराज इन्द्र शतशः सेनाओंपर विजय प्राप्त करता है।'

चतुर्थाध्यायमें सप्तदश मन्त्र हैं। जो मैत्रसूक्तके रूपमें ज्ञात हैं। इन मन्त्रोंमें भगवान् मित्र—सूर्यकी स्तुति है। मैत्रसूक्तमें भगवान् भुवनभास्करका मनोरम वर्णन प्राप्त होता है—

ॐ आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥

अर्थात् रात्रिके समयमें अन्धकारमय तथा अन्तरिक्ष लोकमेंसे पुनः-पुनः उदीयमान देवोंको तथा मनुष्योंको स्व-स्व कार्योंमें निहित करनेवाले, सबके प्रेरक, प्रकाशमान भगवान् सूर्य सुवर्णरंगी रथमें बैठ करके सर्वभुवनोंके लोगोंकी पाप-पुण्यमयी प्रवृत्तियोंका निरीक्षण करते हैं।

रुद्राष्टाध्यायीके पाँचवें अध्यायमें ६६ मन्त्र हैं। यह अध्याय प्रधान है। विद्वान् इसको 'शतरुद्रिय' कहते हैं। '**शतसंख्याता रुद्रदेवता अस्येति शतरुद्रियम्।**' इन मन्त्रोंमें भगवान् रुद्रके शतशः रूप वर्णित हैं।

कई ग्रन्थोंमें शतरुद्रियके पाठका महत्त्व वर्णित है। कैवल्योपनिषद्में कहा गया है कि शतरुद्रियके अध्ययनसे मनुष्य अनेक पातकोंसे मुक्त होता है एवं पवित्र बनता है—

यः शतरुद्रियमधीते सोऽग्निपूतो भवति स वायुपूतो भवति स आत्मपूतो भवति स सुरापानात्पूतो भवति स ब्रह्महत्यायाः पूतो भवति॥

जाबालोपनिषद्में ब्रह्मचारियों और श्रीयाज्ञवल्क्यजीके संवादमें ब्रह्मचारियोंने तत्त्वनिष्ठ ऋषिसे पूछा कि किसके जपसे अमृतत्व प्राप्त होता है? तब ऋषिका प्रत्युत्तर था कि 'शतरुद्रियके जपसे'—

अथ हैनं ब्रह्मचारिण ऊचुः किं जप्येनामृतत्वं ब्रूहीति। स होवाच याज्ञवल्क्यः। शतरुद्रियेणेत्येतान्येव ह वा अमृतस्य नामानि। एतैर्ह वा अमृतो भवतीति एवमेवैतद्याज्ञवल्क्यः।

विद्वानोंकी परम्पराके अनुसार पञ्चमाध्यायके एकादश आवर्तन और शेष अध्यायोंके एक आवर्तनके साथ अभिषेकसे एक 'रुद्र' या 'रुद्री' होती है। इसे 'एकादशिनी' भी कहते हैं। एकादश रुद्रीसे लघुरुद्र, एकादश लघुरुद्रसे महारुद्र एवं एकादश महारुद्रसे अतिरुद्रका अनुष्ठान होता है। इन सबका अभिषेकात्मक, पाठात्मक एवं होमात्मक त्रिविध विधान मिलता है। मन्त्रोंके क्रमसे रुद्राभिषेकके नमक-चमक आदि प्रकार हैं। प्रदेशभेदसे भी कुछ विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं।

शतरुद्रियको 'रुद्रसूक्त' भी कहते हैं। इसमें भगवान् रुद्रका भव्यातिभव्य वर्णन हुआ है। प्रथम मन्त्रका आस्वाद लें—

ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः॥

'हे रुद्रदेव! आपके क्रोधको हमारा नमस्कार है। आपके बाणोंको हमारा नमस्कार है एवं आपके बाहुओंको हमारा नमस्कार है।' भगवान् शिवका रुद्रस्वरूप दुष्टनिग्रहणार्थ है, अतः इस मन्त्रमें रुद्रदेवके क्रोधको, बाणोंको एवं उनके चलानेवाले बाहुओंको नमस्कार समर्पण किया गया है।

रु=दुःखम्, द्रावयति इति रुद्रः। रुत्=ज्ञानम्, राति=ददाति इति रुद्रः। रोदयति पापिनः इति वा रुद्रः। तत्त्वज्ञोंने इस प्रकार रुद्र शब्दकी व्याख्या की है अर्थात् भगवान् रुद्र दुःखनाशक, पापनाशक एवं ज्ञानदाता हैं।

रुद्रसूक्तमें भगवान् रुद्रके विविध स्वरूप वर्णित हैं,

यथा—गिरीश, अधिवक्ता, सुमङ्गल, नीलग्रीव, सहस्राक्ष, कपर्दी, मीढुष्टम, हिरण्यबाहु, सेनानी, हरिकेश, अन्नपति, जगत्पति, क्षेत्रपति, वनपति, वृक्षपति, औषधीपति, सत्त्वपति, स्तेनपति, गिरिचर, सभापति, श्वपति, गणपति, व्रातपति, विरूप, विश्वरूप, भव, शर्व, शितिकण्ठ, शतधन्वा, ह्रस्व, वामन, बृहत्, वृद्ध, ज्येष्ठ, कनिष्ठ, श्लोक्य, आशुषेण, आशुरथ, कवची, श्रुतसेन, सुधन्वा, सोम, उग्र, भीम, शम्भु, शंकर, शिव, तीर्थ्य, व्रज्य, नीललोहित, पिनाकधारी, सहस्रबाहु तथा ईशान इत्यादि।

—इन विविध स्वरूपोंद्वारा भगवान् रुद्रकी अनेकविधता एवं अनेक लीलाओंका दर्शन होता है। रुद्रदेवताको स्थावर-जंगम सर्वपदार्थरूप, सर्ववर्ण, सर्वजाति, मनुष्य-देव-पशु-वनस्पतिरूप मान करके सर्वात्मभाव-सर्वान्तर्यामित्वभाव सिद्ध किया गया है। इस भावसे ज्ञात होकर साधक अद्वैतनिष्ठ जीवन्मुक्त बनता है।

षष्ठाध्यायको 'महच्छिर' के रूपमें जाना जाता है। प्रथम मन्त्रमें सोमदेवताका वर्णन है। सुप्रसिद्ध महामृत्युञ्जय-मन्त्र इसी अध्यायमें संनिविष्ट है—

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्। उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः॥

प्रस्तुत मन्त्रमें भगवान् त्र्यम्बक शिवजीसे प्रार्थना है कि जिस प्रकार ककड़ीका परिपक्व फल वृन्तसे मुक्त हो जाता है, उसी प्रकार हमें आप जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त करें, हम आपका यजन करते हैं।

सप्तमाध्यायको 'जटा' कहा जाता है। '**उग्रश्च भीमश्च**' मन्त्रमें मरुत् देवताका वर्णन है। इस अध्यायके '**लोमभ्यः स्वाहा**' से '**यमाय स्वाहा**' तकके मन्त्र कई विद्वान् अभिषेकमें ग्रहण करते हैं और कई विद्वान् इनको अस्वीकार करते हैं, क्योंकि अन्त्येष्टि-संस्कारमें चिताहोममें इन मन्त्रोंसे आहुतियाँ दी जाती हैं।

अष्टमाध्यायको 'चमकाध्याय' कहा जाता है, इसमें कुल २९ मन्त्र हैं। प्रत्येक मन्त्रमें 'च' कार एवं 'मे' का बाहुल्य होनेसे कदाचित् चमकाध्याय अभिधान रखा गया है।

चमकाध्यायके ऋषि 'देव' स्वयं हैं। देवता अग्नि हैं, अतः यह अध्याय अग्निदैवत्य या यज्ञदैवत्य माना जाता है। प्रत्येक मन्त्रके अन्तमें '**यज्ञेन कल्पन्ताम्**' यह पद आता है।

यज्ञ एवं यज्ञके साधनरूप जिन-जिन वस्तुओंकी आवश्यकता हो, वे सभी यज्ञके फलसे प्राप्त होती हैं। ये वस्तुएँ यज्ञार्थ, जनसेवार्थ एवं परोपकारार्थ उपयुक्त हों, ऐसी शुभभावना यहाँ निहित है।

रुद्राष्टाध्यायीके उपसंहारमें '**ऋचं वाचं प्रपद्ये**' इत्यादि चतुर्विंशति मन्त्र शान्त्याध्यायके रूपमें एवं '**स्वस्ति न इन्द्रो**' इत्यादि द्वादश मन्त्र स्वस्ति-प्रार्थनाके रूपमें ख्यात हैं।

शान्त्याध्यायमें विविध देवोंसे अनेकशः शान्तिकी प्रार्थना की गयी है। मित्रताभरी दृष्टिसे देखनेकी बात बड़ी उदात्त एवं भव्य है—

ॐ दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥

साधक प्रभुप्रीत्यर्थ एवं सेवार्थ अपनेको स्वस्थ बनाना चाहता है। स्वकीय दीर्घजीवन आनन्द एवं शान्तिपूर्ण व्यतीत हो, ऐसी आकाङ्क्षा रखता है—'**पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतम्।.....।**'

स्वस्ति-प्रार्थनाके निम्न मन्त्रमें देवोंका सामञ्जस्य सुचारुरूपमें वर्णित है। '**एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति**', यह उपनिषद्-वाक्य यहाँ चरितार्थ होता है—

ॐ अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवता ऽऽदित्या देवता मरुतो देवता विश्वे देवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता॥

इस प्रकार शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टाध्यायीमें भगवान् रुद्रका माहात्म्य विविधता-विशदतासे सम्पूर्णतया आच्छादित है। कविकुलगुरु कालिदासने 'अभिज्ञान शाकुन्तल' नाटकके मङ्गलश्लोक '**या सृष्टिः स्रष्टुराद्या**' द्वारा शिवजीकी जो अष्ट विभूतियोंका वर्णन किया है, वे अष्टविभूतियाँ रुद्राष्टाध्यायीके आठ अध्यायोंमें भी विलसित हैं। इस संक्षिप्त लेखकी समाप्तिमें शिवजीकी वन्दना वैदिक मन्त्रसे ही करें—

ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्। ब्रह्माधिपति- र्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्॥

'**ॐ तत्सत्**'।